

Chapter 6

<p>The Network of Thought Chapter 6 6th Public Talk Saanen 23rd July 1981</p>	<p>अध्याय छह</p>
<p>1 I think we ought to talk over together, going into it rather deeply, the implication of sorrow, so as to find out for ourselves whether sorrow and love can exist together. And also what is our relationship to the sorrow of mankind? - not only to our own personal daily grief, hurt, pain, and the sorrow that comes with death. Mankind has suffered thousands of wars; there seems to be no end to wars. We have left it to the politicians, all over the world, to bring about peace, but what they are doing, if you have understood them, will never bring peace. We are all preparing for war. The preparations are going to have some kind of blow up somewhere in the world. We human beings have never been able to live in peace with each other. We talk about it a great deal. The religions have preached peace - Peace on earth and goodwill - but apparently it has never been possible to have peace on earth, on the earth on which we live, which is not the British earth or the French earth, it is our earth. We have never been able to resolve the problem of killing each other.</p>	<p>मुझे लगता है कि हम सब साथ मिलकर दुख के अभिप्राय पर, इसके निहितार्थों पर चर्चा करें, इसमें गहराई से पैठें ताकि हम स्वयं पता लगा सकें कि क्या दुख और प्रेम एकसाथ रह सकते हैं। और इस बात का भी पता लगाएं कि मनुष्य जाति के दुख के साथ हमारा क्या रिश्ता है?--केवल हमारे अपने दिन-प्रतिदिन के निजी शोक, पीड़ा तथा मृत्यु से जुड़े दुख के साथ ही नहीं। मनुष्य-जाति ने हज़ारों युद्ध झेले हैं; युद्ध का तो मानो कोई अंत ही नहीं। शांति स्थापित करने का काम हमने राजनेताओं को सौंप दिया है, विश्व भर में यही स्थिति है, परंतु यदि आपने उन्हें समझ लिया है तो आपको स्पष्ट हो जाएगा कि वे जो कुछ भी कर रहे हैं उससे शांति कभी स्थापित नहीं होने वाली। हम सब युद्ध की तैयारियों में लगे हुए हैं। इन तैयारियों से विश्व में कहीं न कहीं, किसी न किसी प्रकार का विस्फोट अवश्य होगा। हम एक-दूसरे के साथ शांतिपूर्वक कभी भी नहीं रह पाए हैं। शांति के बारे में हम बातें खूब कर लेते हैं। सारे धर्मों ने शांति का ही संदेश दिया है--पृथ्वी पर शांति और सद्भाव--पर साफ नज़र आता है कि इस धरती पर शांति कभी भी संभव नहीं हो पायी है, इस धरती पर जिस पर हम सब रहते हैं, जो न तो ब्रिटिश धरती है और न ही फ्रेंच धरती, यह हमारी धरती है। एक-दूसरे की हत्या करने से निजात पाना हमारे लिए कभी संभव नहीं हुआ है।</p>
<p>2 Probably we have violence in our hearts. We have never been free from a sense of antagonism, a sense of retaliation, never free from our fears, sorrows, wounds and the pain of daily existence; we never have peace and comfort, we are always in travail. That is part of our life, part of our daily suffering. Man has tried many many ways to be free of this suffering without love; he has suppressed it, escaped from it, identified himself with something</p>	<p>संभवतः हमारे हृदय ही हिंसा से भरे हैं। हम कभी भी शत्रुता के भाव से, प्रतिशोध के भाव से मुक्त नहीं रहे, कभी भी अपने भय से, अपने दुख से, घावों से, प्रतिदिन के जीवन की पीड़ा से मुक्त नहीं हो पाये; हमें कभी भी शांति और चैन नसीब नहीं होता, हमेशा हम परेशानियों में घिरे रहते हैं। यह सब हमारे जीवन का हिस्सा है, हमारे प्रतिदिन के दुखभोग का हिस्सा। इस प्रेम विरहित दुखभोग से मुक्ति पाने के लिए मनुष्य ने कई रास्ते आजमाये हैं। उसने इसका दमन करके देख लिया, किसी श्रेष्ठतर तत्त्व से अपना तादात्म्य कर के</p>

Chapter 6

<p>greater, handed himself over to some ideal, or belief or faith. Apparently this sorrow can never end; we have become accustomed to it, we put up with it, we tolerate it and we never ask ourselves seriously, with a great sense of awareness, whether it is possible to end it.</p>	<p>देख लिया, किसी आदर्श के लिए, किसी विश्वास के लिए, किसी आस्था के लिए अपने-आपको समर्पित कर के देख लिया, फिर भी यह दुख कभी समाप्त होता नहीं लगता। हम इसके अभ्यस्त हो चुके हैं, इसे बर्दाश्त कर लेते हैं और गंभीरता के साथ, उत्कट सजगता के एहसास के साथ हम अपने से कभी यह नहीं पूछते कि क्या इस दुख का समापन संभव है।</p>
<p>3 We should also talk over together the immense implications of death. Death is part of life, though we generally postpone or avoid even talking about it. It is there and we ought to go into it. And we should also enquire whether love - not the remembrance of pleasure which has nothing to do with love and compassion - whether love with its own peculiar all-comprehending intelligence can exist in our life.</p>	<p>साथ ही साथ, मृत्यु के विराट निहितार्थों पर भी हमें मिल कर विचार-विमर्श करना होगा। मृत्यु जीवन का ही एक हिस्सा है, यद्यपि अक्सर हम उसे मुलतवी करते रहते हैं, उसके बारे में बात करना भी टालते रहते हैं। फिर भी मृत्यु तो एक सच्चाई है और हमें उसकी छानबीन करनी ही होगी। और हमें इस बात का भी पता लगाना है कि क्या प्रेम--सुख की स्मृति नहीं जिसका प्रेम और करुणा के साथ कोई वास्ता नहीं है--अपनी विलक्षण सर्वसमावेशी प्रज्ञा के साथ हमारे जीवन में विद्यमान रह सकता है।</p>
<p>4 First of all: do we, as human beings, want to be really free from sorrow? Have we ever actually gone into it, faced it and understood all the movement of it, the implications involved in it? Why is it that we human beings - who are so extraordinarily clever in the technological world - have never resolved the problem of sorrow? It is important to talk this question over together, and find out for ourselves whether sorrow can really end.</p>	<p>पहली बात तो यह है कि क्या हम सचमुच दुख से मुक्त होना चाहते हैं? क्या हम कभी दुख में वस्तुतः पैटे हैं, इसकी छानबीन की है, इसका सामना किया है, इसकी समस्त गतिविधि को, इसके निहितार्थों को समझा है? हमारा तकनीकी क्षेत्र में तो असाधारण चातुर्य है, फिर हम दुख की इस समस्या का निराकरण क्यों नहीं कर पाये हैं? इस प्रश्न पर साथ-साथ चर्चा करना और स्वयं इस बात का पता लगाना कि क्या दुख का वास्तव में अंत हो सकता है बहुत ज़रूरी है।</p>
<p>5 We all suffer in various ways. There is the sorrow for death of someone, there is the sorrow of great poverty - which the East knows very well - and the great sorrow of ignorance - 'ignorance' not in the sense of book knowledge but the ignorance of not knowing oneself totally, the whole complex activity of the self. If we do not understand that very deeply then there remains the sorrow of that ignorance. There is the sorrow of never</p>	<p>हम कई तरह से दुखित होते हैं। किसी के मर जाने का दुख, गरीबी का दुख जिसे पूरब के लोग बेहतर जानते हैं, और फिर अज्ञान का घना दुख है--किताबी ज्ञान के अभाव के अर्थ में 'अज्ञान' नहीं बल्कि पूरी तरह अपने-आप को, स्व की समस्त जटिल क्रियाशीलता को न जानने के अर्थ में अज्ञान--यदि हम इसे बहुत गहराई से नहीं समझ लेते तो उस अज्ञान का दुख बना रहता है। यद्यपि तकनीकी तथा अन्य दुनियावी मामलों में सफल होने की निपुणता हममें अवश्य है, तथापि</p>

Chapter 6

<p>being able to realize something fundamentally, deeply - though we are very clever at achieving technological success and other successes in this world. We have never been able to understand pain, not only physical pain, but the deep psychological pain, however learned or not very erudite we may be. There is the sorrow of constant struggle, the conflict from the moment we are born until we die. There is the personal sorrow of not being beautiful outwardly or inwardly. There is the sorrow of attachment with its fear, with its corruption. There is the sorrow of not being loved and craving to be loved. There is the sorrow of never realizing something beyond thought, something which is eternal. And ultimately there is the sorrow of death.</p>	<p>कुछ भी कभी मौलिक रूप से, गहराई से न समझ पाने का दुख भी है। हम चाहे जितने जानकार हों, पंडित हों, या न भी हों, हम पीड़ा को कभी समझ नहीं पाये हैं, केवल शारीरिक पीड़ा ही नहीं बल्कि गहरी मानसिक पीड़ा। अविरत संघर्ष करते रहने का, जन्म के क्षण से लेकर मृत्यु होने तक चलने वाले द्वंद्व का भी एक दुख होता है। बाहर से या भीतर से सुंदर न होने का निजी दुख भी है। फिर आसक्ति तथा उसके साथ जुड़े हुए भय और विकृति का दुख है। प्रेम न पाने का तथा प्रेम के लिए तरसने का भी एक दुख होता है। जो विचार से परे है, शाश्वत है, उसका बोध कभी न हो पाने का दुख है और अंततः मृत्यु का दुख तो है ही।</p>
<p>6 We have described various forms of sorrow. The basic factor of sorrow is self-centred activity. We are all so concerned with ourselves, with our endless problems, with old age, with not being able to have a deep inward yet global outlook. We all have images of ourselves and of others. The brain is always active in day dreaming, being occupied with something or other, or creating pictures and ideas from the imagination. From childhood one gradually builds the structure of the image which is 'me'. Each one of us is doing this constantly; it is that image, which is 'me', that gets hurt. When the 'me' is hurt there is resistance, the building of a wall round oneself so as not to be hurt any more; and this creates more fear and isolation, the feeling of having no relationship, the encouraging of loneliness which also brings about sorrow.</p>	<p>हमने दुख के विभिन्न रूपों का वर्णन किया है। दुख का मूल कारण है, स्वकेंद्रित गतिविधि। हम सभी को अपने बारे में ही फिक्र रहती है, अपनी अंतहीन समस्याओं की, अपने बुढ़ापे की, एक गहरी आंतरिक किंतु वैश्विक दृष्टि में अक्षम होने की। हम सब की अपने बारे में तथा दूसरों के बारे में प्रतिमाएं होती हैं। हमारा मस्तिष्क हमेशा दिवास्वप्न देखने में लगा रहता है, किसी न किसी बात में व्यस्त रहता है या कल्पनाशक्ति से चित्र और धारणाएं बनाता रहता है। बचपन से धीरे-धीरे हम अपनी प्रतिमा का ढांचा बनाते जाते हैं, जो कि 'मैं' है। हममें से प्रत्येक व्यक्ति अनवरत यही किया करता है; और यही वह प्रतिमा है, वह 'मैं' है जिसे चोट पहुंचती है। जब यह 'मैं' आहत होता है तब प्रतिरोध उत्पन्न होता है, अपने चारों ओर दीवार खड़ी कर ली जाती है, ताकि फिर से चोट न लगे। इससे भय तथा अलगाव निर्मित होते हैं, किसी के साथ कोई भी संबंध न होने का एहसास पैदा होता है, अकेलेपन को बढ़ावा मिलता है और इससे भी दुख व्यापता है।</p>
<p>7 After having described the various forms of sorrow, can we look at it</p>	<p>दुख के विभिन्न प्रकारों का वर्णन करने के बाद, क्या हम दुख की ओर किसी शब्दीकरण के बिना,</p>

Chapter 6

<p>without verbalization, without running away from it into intellectual adaptation to some form of religious or intellectual conclusion? Can we look at it completely, not moving away from it, but staying with it? Suppose I have a son who is deaf or blind; I am responsible, and it gives sorrow knowing that he can never look at the beautiful sky, never hear the running waters. There is this sorrow: remain with it, do not move away from it. Or suppose I have great sorrow for the death of someone with whom I have lived for many years. Then there is this sorrow which is the essence of isolation; we feel totally isolated, completely alone. Now, remain completely with that feeling, not verbalizing it, not rationalizing it, or escaping from it, or trying to transcend it - all of which is the movement that thought brings about. When there is that sorrow and thought does not enter into it at all - which means that you are completely sorrow, not trying to overcome sorrow, but totally sorrow - then there is the disappearance of it. It is only when there is the fragmentation of thought that there is travail.</p>	<p>किसी प्रकार के धार्मिक या बुद्धिगत निष्कर्ष के साथ बौद्धिक सामंजस्य बिठाकर इससे भागे बिना देख सकते हैं? क्या हम पूर्णतः दुख का अवलोकन कर सकते हैं, इससे दूर हटे बगैर, इसके साथ रहते हुए? मान लीजिए, मेरा एक बेटा है और वह बहरा या अंधा है; मुझे दायित्वबोध है और यह जानना दुखदायी है कि वह कभी इस सुंदर आकाश को देख नहीं सकता, कभी झरनों के कलरव को सुन नहीं सकता। यह दुख मौजूद है : इसके साथ रहिए, इससे दूर मत हटिए। या फर्ज कीजिये जिस व्यक्ति के साथ मैंने कई साल गुज़ारे उसकी मौत हो जाती है जिसका मुझे गहरा दुख है। तब यह दुख अकेलेपन का सार है; हम महसूस करते हैं कि हम पूरी तरह अलग-थलग, बिलकुल अकेले पड़ गये हैं। अब इस दुख के साथ पूरी तरह बने रहिये, इसे शब्दों में मत ढालिये, इसे बुद्धिसंगत ठहराने का उपक्रम मत कीजिये, इससे भागिये नहीं, और न ही इसके पार जाने की चेष्टा कीजिये--क्योंकि यह तमाम गतिविधि तो विचार की पैदाइश है। जब केवल दुख विद्यमान होता है और विचार का कतई हस्तक्षेप नहीं होता--जिसका मतलब है कि आप पूरी तरह वह दुख होते हैं, दुख पर काबू पाने की कोशिश नहीं कर रहे होते, स्वयं ही दुख होते हैं--तब दुख का लोप हो जाता है। परिताप का, वेदना का वजूद केवल विचार के विखंडन की मौजूदगी में ही होता है।</p>
<p>8 When there is sorrow, remain with it without a single movement of thought so that there is the wholeness of it. The wholeness of sorrow is not that I am in sorrow, I am sorrow - and then there is no fragmentation involved in it. When there is that totality of sorrow, no movement away from it, then there is the withering away of it.</p>	<p>जब दुख विद्यमान हो, तब विचार की किसी भी हलचल के बिना उस दुख के साथ बने रहिए, ताकि उसकी अखंडता अबाधित रहे, उसकी समग्रता भंग न हो। दुख की समग्रता का अभिप्राय यह नहीं है कि मैं दुख में हूँ, बल्कि यह है कि मैं ही दुख हूँ--और तब इसमें कोई विखंडन निहित नहीं है। इस प्रकार जब दुख अपनी संपूर्णता में विद्यमान होता है, उससे दूर हटने की कोई गतिविधि नहीं होती, तब दुख कुम्हला जाता है, विसर्जित हो जाता है।</p>
<p>9 Without ending sorrow how can there be love? Strangely we have associated sorrow and love. I love my son and when he dies I am full of sorrow - sorrow</p>	<p>जब तक दुख का अंत नहीं होता, तब तक प्रेम कैसे संभव है? आश्चर्य की बात है कि हमने प्रेम और दुख को संबंधित किया हुआ है। मैं अपने बेटे से प्रेम करता हूँ और जब वह मर जाता है</p>

Chapter 6

<p>we associate with love. Now we are asking: when there is suffering can love exist at all? But is love desire? Is love pleasure - so that when that desire, that pleasure, is denied, there is suffering? We say that suffering as jealousy, attachment, possession, is all part of love. That is our conditioning, that is how we are educated, that is part of our inheritance, tradition. Now, love and sorrow cannot possibly go together. That is not a dogmatic statement, or a rhetorical assertion. When one looks into the depth of sorrow and understands the movement of it in which is involved pleasure, desire, attachment, and the consequences of that attachment, which bring about corruption when one is aware without any choice, without any movement, aware of the whole nature of sorrow, then can love exist with sorrow? Or is love something entirely different? We ought to be clear that devotion to a person, to a symbol, to the family, is not love. If I am devoted to you for various reasons, there is a motive behind that devotion. Love has no motive. If there is a motive it is not love, obviously. If you give me pleasure, sexually, or various forms of comfort, then there is dependency; the motive is my dependence on you because you give me something in return; and as we live together I call that love. Is it? So one questions the whole thing and asks oneself: where there is motive can love exist?</p>	<p>तो मैं दुख से भर उठता हूँ--इस प्रकार दुख को हम प्रेम के साथ जोड़ देते हैं। अब हम पूछ रहे हैं, जब तक व्यथा मौजूद है, दुख मौजूद है, तब तक क्या प्रेम का अस्तित्व संभव भी है? प्रेम क्या कोई इच्छा है? प्रेम क्या सुख है कि उस कामना, उस सुख की पूर्ति न होने पर दुख छा जाए? हम कहते हैं कि ईर्ष्या, आसक्ति, स्वामित्व आदि रूपों में दुख प्रेम का ही एक भाग है। ऐसी हमारी संस्कारबद्धता है, हम इसी प्रकार शिक्षित हुए हैं, यह हमारी विरासत का, हमारी परंपरा का हिस्सा है। अब प्रेम और दुख दोनों कभी एकसाथ नहीं रह सकते। यह कोई मताग्रही वक्तव्य नहीं, और न ही कोई आलंकारिक कथन। जब हम दुख की गहराई में झांकते हैं और इसकी गतिविधि को समझते हैं जिसमें शामिल है सुख, इच्छा, आसक्ति और उस आसक्ति के परिणाम जो विकृति को जन्म देते हैं, जब हम दुख की समग्र प्रकृति के प्रति, बिना पसंद-नापसंद के, बिना किसी हलचल के सजग होते हैं, तो क्या दुख के साथ प्रेम का वजूद मुमकिन है? या फिर प्रेम कोई बिलकुल अलग ही बात है? हमें एक बात स्पष्ट रूप से समझ लेनी चाहिए कि किसी व्यक्ति के प्रति, किसी प्रतीक के प्रति, अपने परिवार के प्रति अनुरक्ति को, निष्ठा को प्रेम नहीं कहा जा सकता। यदि मैं विभिन्न कारणों से आपके प्रति श्रद्धा रखता हूँ तो उस श्रद्धा के पीछे कोई हेतु होता है, और प्रेम का कोई हेतु, कोई प्रयोजन नहीं होता। यदि कोई हेतु है, तो प्रेम है ही नहीं, यह बिलकुल स्पष्ट है। आपसे मुझे यदि सुख मिलता है, जैसे कि यौनसुख या अलग-अलग प्रकार के चैन-आराम, तो इसमें परावलंबन, निर्भरता निहित है; आप पर निर्भरता मेरा प्रयोजन है, क्योंकि आप बदले में मुझे कुछ देते हैं, और हम साथ में रहते हैं तो मैं इसे प्रेम कहने लगता हूँ। क्या यह प्रेम है? इसलिए इस सारे मसले पर शंका उठाते हुए हम अपने-आप से पूछें : जहां प्रयोजन है, वहां क्या प्रेम का अस्तित्व हो सकता है?</p>
<p>10 Where there is ambition, whether in the physical world, or in the psychological world - ambition to be on top of everything, to be a great success,</p>	<p>जहां महत्वाकांक्षा है क्या वहां प्रेम रह सकता है? वह महत्वाकांक्षा भौतिक संसार में हो या मानसिक संसार में--हर बात में चोटी पर होने की महत्वाकांक्षा, बहुत सफल व्यक्ति बनने की</p>

Chapter 6

<p>to have power, religiously, or physically - can love exist? Obviously not. We recognise that it cannot exist and yet we go on. Look what happens to the brain when we play such tricks. I am ambitious, I want to be spiritually next to god, specially on his right hand; I want to achieve illumination - you know, aU that deception; you cannot achieve illumination; you cannot possibly achieve that which is beyond time. Competitiveness, conformity, jealousy, fearfulness, hate, all that is going on, psychologically, inwardly. We are either conscious of it, or we deliberately avoid it. Yet I say to my wife or father, whoever it is, 'I love you.' What happens when there is such deep contradiction in my life, in my relationship? How can that contradiction have any sense of deep integrity? And yet that is what we are doing until we die, can one live in this world without ambition, without competitiveness? Look at what is happening in the outward world. There is competition between various nations; the politicians are competing with each other, economically, technologically, in building up the instruments of war; and so we are destroying ourselves. We allow this to go on because we are also inwardly competitive.</p>	<p>महत्त्वाकांक्षा, धार्मिक या भौतिक तौर पर शक्ति पाने की महत्त्वाकांक्षा, जहां किसी भी प्रकार की महत्त्वाकांक्षा है, वहां क्या प्रेम रह सकता है? बिलकुल नहीं। हम मानते हैं कि वहां प्रेम नहीं रह सकता, और फिर भी हम अपने उसी पुराने ढर्रे पर चलते रहते हैं। जब हम ऐसे दांव-पेच खेलते हैं तब हमारे मस्तिष्क पर क्या गुज़रती है, ज़रा देखिए। मैं बड़ा महत्त्वाकांक्षी हूँ, आध्यात्मिकता में मेरा स्थान भगवान की बिलकुल बगल में होना चाहिए, हो सके तो भगवान की दाहिनी ओर; मैं संबोधि हासिल करना चाहता हूँ--आपको पता ही है वह सारा छलावा--संबोधि कोई हासिल करने की चीज़ नहीं, जो समय के परे है उसे आप उपलब्ध नहीं कर सकते। मानसिक, भीतरी तौर पर प्रतिस्पर्धा, परंपरानुसरण, ईर्ष्या, भय, विद्वेष--यह सब चल रहा है। या तो हमें इसका एहसास होता है या हम जानबूझ कर इसे अनदेखा करते रहते हैं। परंतु फिर भी मैं अपनी पत्नी से या अपने पिता से या जो कोई भी हो उससे कहता हूँ कि "मैं आपसे प्रेम करता हूँ।" मेरे जीवन में, मेरे रिश्तों में जब इस प्रकार की गहन विसंगति होती है, तब क्या होता है? उस विसंगति में गहरी ईमानदारी का कोई भाव कैसे रह सकता है? और मरते दम तक हम यही तो किया करते हैं। क्या इस संसार में हम बिना महत्त्वाकांक्षा के, बिना प्रतिद्वंद्विता के जी सकते हैं? बाहरी विश्व में क्या चल रहा है, उस पर ज़रा दृष्टि डालिए। विभिन्न राष्ट्रों के बीच प्रतिद्वंद्विता है, राजनेता लोग एक दूसरे के साथ प्रतिस्पर्धा में जुटे हैं, आर्थिक दृष्टि से, तकनीक के लिहाज़ से, युद्ध की सामग्री तैयार करने के मामले में, और इस प्रकार हम अपना सर्वनाश करने पर तुले हुए हैं। यह सब हम इसलिए चलने देते हैं क्योंकि हम स्वयं भी भीतर प्रतिस्पर्धा में लगे हैं।</p>
<p>11 As we pointed out, if a few really understand what we have been talking about for the last fifty years, and are really deeply involved and have brought about the end of fear, sorrow and so on, then that will affect the whole of the consciousness of mankind. Perhaps you are doubtful whether it will affect the consciousness of mankind? Hitler and</p>	<p>जैसा कि हमने पहले भी ज़िक्र किया है, यदि कुछ लोग भी उसे सचमुच समझ पाएं जिसकी हम पिछले पचास वर्षों से बात कर रहे हैं और यदि वस्तुतः वे लोग गहराई के साथ इसमें लग सकें और भय, दुख आदि का अंत कर पाएं, तो इसका मनुष्यजाति की समस्त चेतना पर असर पड़ेगा। ऐसा लगता है आपको इस बारे में संदेह है कि इसका मनुष्यजाति की चेतना पर असर पड़ेगा कि</p>

Chapter 6

<p>his kind have affected the consciousness of mankind - Napoleon, the Caesars, the butchers of the world have affected mankind. Also the good People have affected mankind - I do not mean respectable people. The good are those who live life wholly, not fragmented. The great teachers of the world have affected human consciousness. But if there was a group of people who had understood what we have been talking about - not verbally but actually living life with great integrity - then it would affect the whole consciousness of man. This is not a theory. This is an actual fact. If you understand that simple fact you will see that it goes right through; television, newspapers, everything, is affecting the consciousness of man. So love cannot exist where there is a motive, where there is attachment, where there is ambition and competitiveness, love is not desire and pleasure. Just feel that, see it.</p>	<p>नहीं। हिटलर तथा उसी प्रकार के दूसरे लोगों ने मनुष्यजाति की चेतना को प्रभावित किया है; नेपोलियन ने, सीज़र ने, संसार के हत्यारों ने मनुष्यजाति पर प्रभाव डाला है। अच्छे लोगों ने भी मनुष्यजाति को प्रभावित किया है--अच्छे लोगों से मेरा अभिप्राय 'प्रतिष्ठित' लोग नहीं। अच्छे लोग वे हैं जो जीवन को समग्रता से जीते हैं, खंडित रूप से नहीं। विश्व के महान शिक्षकों ने मानवीय चेतना को प्रभावित किया है। परंतु हम जो बात कर रहे हैं उसे समझ पाने वालों का यदि एक समूह हो--शाब्दिक तौर पर नहीं, बल्कि अगाध अखंडता, गहरी ईमानदारी के साथ वास्तव में जीवन जीते हुए--तो इसका असर मनुष्य की समग्र चेतना पर पड़ने वाला है। यह कोई सैद्धांतिक बात नहीं है। यह एक वास्तविकता है। यदि इस सरल से तथ्य को आप समझ लेंगे तो आप देखेंगे कि ऐसा हर स्तर पर हुआ करता है; टेलीविज़न, समाचार पत्र, हर माध्यम मनुष्य-चेतना को प्रभावित कर रहा है। तो जहां कोई हेतु है, जहां आसक्ति है, जहां कोई महत्त्वाकांक्षा है, प्रतिद्वंद्विता है, वहां प्रेम नहीं रह सकता। प्रेम न तो इच्छा है, और न ही सुख। इसे महसूस-भर कीजिए, इसे समझिए।</p>
<p>12 We are going into all this so as to bring about order in our life - order in our 'house', which has no order. There is so much disorder in our life and without establishing an order that is whole, integral, meditation has no meaning whatsoever. If one's 'house' is not in order one may sit in meditation, hoping that through that meditation one will bring about order; but what happens when one is living in disorder and one meditates? One has fanciful dreams, illusions and all kinds of nonsensical results. But a sane, intelligent, logical man, must first establish order in daily life, then he can go into the depths of meditation, into the meaning and the beauty of it, the greatness of it, the worth of it.</p>	<p>यह सब विचार-विमर्श हम इसलिए कर रहे हैं ताकि हमारे जीवन में व्यवस्था आ सके। हमारे अस्त-व्यस्त 'घर' में व्यवस्था आ सके। हमारे जीवन में बहुत ही अव्यवस्था है, और समग्र, समन्वित व्यवस्था स्थापित किये बिना ध्यान का कुछ भी अर्थ नहीं है। यदि आपके 'घर' में व्यवस्था नहीं है तो आप ध्यान की मुद्रा में बैठ तो जाएंगे यह उम्मीद करते हुए कि इस प्रकार ध्यान करने के परिणामस्वरूप वह व्यवस्था आ जायेगी परंतु क्या आप जानते हैं कि जब कोई अव्यवस्था में जीते हुए ध्यान करने की चेष्टा करता है तो उसका परिणाम क्या होता है? उसे भ्रांतिपूर्ण सपने आते हैं, भ्रम पैदा होते हैं, और तमाम तरह के निरर्थक परिणाम उसके सामने आते हैं। पर किसी भी संतुलित, तर्कनिष्ठ, विवेकशील व्यक्ति को चाहिए कि वह पहले अपने दैनिक जीवन में सुव्यवस्था स्थापित करे, तब कहीं वह ध्यान की गहराइयों का, उसकी सुंदरता व अर्थवत्ता का, उसकी महत्ता का, उसके मूल्य का अनुसंधान कर</p>

Chapter 6

	सकेगा।
13 Whether we are very young, middle aged or old, death is part of our life, just as love, pain, suspicion, arrogance, are all part of life. But we do not see death as part of our life; we want to postpone it, or put it as far away from us as possible, so we have a time interval between life and death. What is death? This question is again rather complex.	हम कम उम्र के हों, प्रौढ़ हों या वृद्ध, हर स्थिति में मृत्यु हमारे जीवन का हिस्सा है, ठीक उसी प्रकार जैसे प्रेम, पीड़ा, संदेह, अभिमान ये सब जीवन का हिस्सा हैं। परंतु हम मृत्यु को जीवन का अंग नहीं मानते; हम उसे आगे धकेलना चाहते हैं, या जितना संभव हो उसे अपने से दूर रखना चाहते हैं, इस प्रकार हमारे लिए जीवन और मृत्यु के बीच समय का एक अंतराल होता है। मृत्यु क्या है? यह प्रश्न अपने-आपमें काफी जटिल है।
14 The Christian concept of death and suffering and the Asiatic conclusion about reincarnation are just beliefs and like all beliefs they have no substance. So put those aside and let us go into it together. It may be unpleasant; you may not want to face it. You are living now, healthily, having pleasure, fear, anxiety and tomorrow there is hope and you do not want to be concerned with the ending of all this. But if we are intelligent, sane, rational, we have to face not only the living and all the implications of the living, but also the implications of dying. We must know both. That is the wholeness of life in which there is no division. So what is death apart from the physical ending of an organism that has lived wrongly, addicted to drink, to drugs and over indulgence or asceticism and denial? The body goes through this constant battle between the opposites, it has not a balanced harmonious life, but one of extremes. Also the body goes through great stress imposed by thought. Thought dictates and the body is controlled thereby; and thought being limited brings about disharmony. it causes us to live in disharmony physically, forcing, controlling, subjugating, driving the body - this is what we are all doing including fasting for political or religious reasons, which is violence. The body may endure all this	मृत्यु तथा दुख के बारे में ईसाइयों की संकल्पना और पुनर्जन्म के बारे में एशियाई निष्कर्ष--दोनों ही विश्वास मात्र हैं, और अन्य विश्वासों की भांति उनमें कुछ तत्त्व नहीं है। इसलिए उन सब को अलग हटा कर इस बात की हम सब मिलकर साथ-साथ छानबीन करें। हो सकता है आपके लिए यह अप्रिय हो, शायद आप इसका सामना करना न चाहें। इस समय आप जी रहे हैं, स्वस्थ हैं, अपने सुख के, भय के, चिंता के साथ, आने वाले उज्ज्वल कल की आस लगाए, और इस सबके अंत से आप सरोकार नहीं रखना चाहते। परंतु यदि हम बुद्धिमान हैं, असंतुलित नहीं हैं, विवेकशील हैं, तो हमें न केवल जीवन का और उसके निहितार्थों का सामना करना होगा बल्कि मरने के निहितार्थों से भी दो-चार होना पड़ेगा। हमें जीवन और मृत्यु दोनों को जानना होगा। यही जीवन की समग्रता है, इसमें कोई बंटवारा नहीं है। तो मृत्यु क्या है, शारीरिक संरचना के भौतिक अंत के अलावा, जिसका गलत ढंग से जीना हुआ है, जिसे शराब, नशीले पदार्थों, अतिभोग या फिर तप-त्याग व निग्रह का आदी बनकर जीना पड़ा है? शरीर को विपरीतों के बीच चल रहे संघर्ष से लगातार गुज़रना पड़ता है, उसे एक संतुलित, समन्वित जीवन नसीब नहीं होता, वह एक अति से दूसरी अति के बीच जीता है। और फिर, विचार द्वारा लादे गये भारी तनाव से भी उसे गुज़रना पड़ता है। विचार आदेश देता है और शरीर से उसके मुताबिक पेश आया जाता है; और विचार सीमित होने के कारण विवाद, भेद उत्पन्न करता है, शारीरिक रूप से असामंजस्य में जीने के लिए वह हमें मजबूर करता है--शरीर को अपने

Chapter 6

for many years, reaching old age and not getting senile. But the body will inevitably come to an end, the organism will die; is that what death is? Is the coming to an end of the organism, either through some disease, old age or accident, what we are concerned about? Is it that thought identifies itself with the body, with the name, with the form, with all the memories, and says, 'Death must be avoided'? Is it that we are afraid of the coming to an end of a body that has been looked after, cared for? Perhaps we are not afraid of that especially, perhaps slyly anxious about it, but that is not of great importance. What is far more important for us is the ending of the relationships that we have had, the pleasures that we have had, the memories, pleasant and unpleasant, all of which make up what we call living - the daily living, going to the office, the factory, doing some skilful job, having a family, being attached to the family, with all the memories of that family, my son, my daughter, my wife, my husband, in the family unit - which is fast disappearing. There is the feeling of being related to somebody, though in that relationship there may be great pain and anxiety; the feeling of being at home with somebody; or not at home with anybody. Is that what we are afraid of? - the ending of my relationships, my attachments, the ending of something I have known, something to which I have clung, something in which I have specialized all my life, - am I afraid of the ending of all that? That is the ending of all that is 'me' - the family, the name, the home, the tradition, the inheritance, the cultural education and racial inheritance, all that is 'me', the 'me' that is struggling or that is happy. Is that what we are afraid of? - the ending of 'me', which is the ending, psychologically, of the life which I am

हिसाब से चलाते हुए, उस पर अपनी मर्जी थोपते हुए, उसके साथ ज़बरदस्ती करते हुए--हम सब यही कर रहे हैं, इसमें राजनीतिक या धार्मिक कारणों से किया जाने वाला अनशन भी शामिल है, जो हिंसा ही है। शरीर शायद कई वर्षों तक यह सब सहता रहे, हो सकता है कि बिना सठियाए वृद्धावस्था तक भी पहुंच जाए। पर आखिर शरीर तो अनिवार्यतया नष्ट होगा ही, मनोदैहिक संरचना तो अंत को प्राप्त होगी ही; क्या इसी को मृत्यु कहते हैं? किसी व्याधि के, वार्धक्य के, या किसी दुर्घटना के कारण इस शरीर का अंत होना, क्या यही है वह बात जिसके बारे में हम चिंतित हैं? क्या ऐसा है कि विचार शरीर के साथ, नाम के साथ, रूप के साथ, तमाम स्मृतियों के साथ तादात्म्य कर लेता है और कहता है "मृत्यु से बचना चाहिए"? क्या ऐसा है कि जिस शरीर की हमने देख-भाल की, जिसका ध्यान रखा, उस शरीर का अंत होने से हम भयभीत हैं? शायद हम खास तौर पर इस बारे में भयभीत नहीं हैं, पर शायद भीतर, छिपे तौर पर इस बारे में चिंतित ज़रूर हैं, पर उसका कोई विशेष महत्त्व नहीं है। हमारे लिए जो कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण है वह है अंत हो जाना उन संबंधों का जो हमने जिये, उन सुखों का जो हमने भोगे, अंत सुखद और दुखद स्मृतियों का, इस सबका अंत जिसके सम्मिश्रण को ही हम जीवन कहते हैं--हमारा दैनिक जीवन, दफ्तर या फैक्टरी जाना, कोई कौशलयुक्त काम करना, परिवार बनाना, परिवार से लगाव होना, उस परिवार की सारी स्मृतियों सहित, मेरा बेटा, मेरी बेटी, मेरी पत्नी, मेरा पति, परिवार की इकाई, जो बड़ी तेजी से लुप्त होती जा रही है। एक एहसास होता है किसी के साथ जुड़े होने का, चाहे उस रिश्ते में बहुत पीड़ा हो, बहुत चिंता हो; किसी की मौजूदगी में चैन का एहसास होना, या किसी के साथ भी ऐसा महसूस न कर पाना। तो क्या इसी सब को ले कर हम भयभीत हैं--मेरे संबंधों का अंत, मेरी आसक्तियों का अंत, उसका अंत जिससे मैं चिपटा रहा, जिसमें मैं ताउम्र खास काबलियत हासिल करता रहा--क्या मैं इस सब का अंत हो जाने से भयभीत हूँ? 'मैं' में जो कुछ निहित है यह उस सब का अंत है--परिवार, नाम, घर, परंपरा, विरासत, सांस्कृतिक शिक्षण और प्रजातीय विरासत यह सब 'मैं' ही है, वह मैं जो

Chapter 6

<p>leading, the life which I know with its pain and sorrow. Is that what we are afraid of?</p>	<p>जद्दोजहद में लगा है या खुश है। क्या हम इसी से भयभीत हैं--'मैं' के अंत से, अर्थात् मानसिक तौर पर उस जीवन के अंत से जिसे मैं जी रहा हूँ और जिस जीवन से, जिसकी पीड़ा से मैं परिचित हूँ? क्या हम इसी अंत से भयभीत हैं?</p>
<p>15 If we are afraid of that and have not resolved that fear, still death inevitably comes, then what happens to that consciousness, which is not your consciousness but the consciousness of mankind, the consciousness of the vast whole of humanity? As long as I am afraid as an individual with my limited consciousness, it is that that I am afraid of. It is that of which I am scared. One realizes that it is not a fact that one's consciousness is totally separate from that of everybody else - one sees that separateness is an illusion, it is illogical, unhealthy. So one realizes, perhaps in one's heart, in one's feeling, that one is the whole of mankind - not an individual consciousness, which has no meaning. And one has lived this kind of life, which is pain, sorrow, anxiety, and if one's brain has not transformed some of all that, one's life is only a further confusion to the wholeness. But if one realizes that one's consciousness is the consciousness of mankind, and that for the human consciousness one is totally responsible, then freedom from the limitation of that consciousness becomes extraordinarily important. When there is that freedom then one is contributing to the breaking down of the limitation of that consciousness. Then death has a totally different meaning.</p>	<p>यदि हम इसी से भयभीत हैं और इस भय का निवारण हमने नहीं किया है, तब भी मृत्यु तो अनिवार्य रूप से आनी ही है, तब उस चेतना का क्या होता है जो आपकी निजी चेतना नहीं, बल्कि मनुष्यजाति की चेतना है, उस विशाल मानव समष्टि की चेतना? जब तक मैं अपनी सीमित चेतनासहित एक व्यक्ति के रूप में भयभीत हूँ, तब तक मैं वस्तुतः उस सब से ही डरा हुआ हूँ जिसकी हम बात कर रहे थे। मुझे उसी का खौफ है। हम यह महसूस करते हैं कि हमारी चेतना का अन्य मनुष्यों की चेतना से भिन्न होना तथ्य नहीं है--हम यह देख पाते हैं कि अलग होने का भाव एक धोखा है, तर्कविरुद्ध है, हानिकर है। तो हममें यह एहसास जागता है, शायद हृदय में, अपने भावजगत में कि मैं समूची मनुष्य जाति से अभिन्न हूँ--न कि एक वैयक्तिक चेतना जिसका कुछ भी मतलब नहीं। और हम उसी तरह का जीवन जीते आये हैं जो पीड़ा है, दुख है और चिंता है एवं यदि हमारे मस्तिष्क ने इस सब में से कुछ भी रूपांतरित नहीं किया है, बदला नहीं है, तो हमारा जीवन इस समग्रता में मात्र एक और भ्रांति ही है। पर यदि कोई महसूस कर पाये कि व्यक्ति की चेतना मनुष्य-जाति की चेतना है और उस मनुष्यचेतना के लिए व्यक्ति स्वयं पूर्णतः उत्तरदायी है, तो फिर उस चेतना की सीमाबद्धता से मुक्ति असाधारण रूप से महत्त्वपूर्ण हो जाती है। जब वह मुक्ति घटित होती है, तब उस चेतना की सीमाबद्धता को तोड़ने में हमारा योगदान हो रहा होता है। और तब मृत्यु का एक पूर्णतः भिन्न अर्थ होता है।</p>
<p>16 One has lived a so-called individual life, concerned about oneself and one's problems. Those problems never end, they increase. One has lived that kind of life. One has been brought up, educated, conditioned, to that kind of life. You</p>	<p>आज तक हम तथाकथित व्यक्तिगत जीवन जीते आए हैं, अपने आप से और अपनी समस्याओं से सरोकार रखते हुए। वे समस्याएं कभी समाप्त नहीं होतीं, बढ़ती ही रहती हैं। हम इसी प्रकार का जीवन जीते रहे हैं। हमारी परवरिश, हमारी शिक्षा,</p>

Chapter 6

come along as a friend - you like me, or you love me - you say to me: 'Look, your consciousness is not yours; you suffer as other people suffer'. I listen to it and I do not reject what you say, for it makes sense, it is sane and I see that in what you have told me there can Perhaps be peace in the world. And I say to myself: 'Now, can I be free from fear? I see that I am responsible, totally, for the whole of consciousness. See that when I am investigating fear I am helping the total human consciousness to lessen fear. Then death has a totally different meaning. I no longer have phantasies that I am going to sit next to god, or that I am going to heaven through some Peculiar nebula. I am living a life which is not my particular life. I am living a life of the whole of humanity and if I understand death, if I understand grief, I am cleansing the whole of the consciousness of mankind. That is why it is important to understand the meaning of death and perhaps to find that death has great significance, great relationship with love, because where you end something love is. When you end attachment completely then love is.

हमारी सारी संस्कारबद्धता इसी प्रकार के जीवन हेतु हुई है। आप एक मित्र के तौर पर आते हैं--आप मुझे पसंद करते हैं या मुझे प्यार करते हैं--मुझसे आप कहते हैं, "देखिये, आपकी चेतना आपकी नहीं है; जैसे और लोग दुख से गुज़रते हैं वैसे ही आप भी गुज़रते हैं"। मैं आपकी बात सुनता हूँ और उसे खारिज नहीं करता, क्योंकि वह बात मुझे अर्थपूर्ण लगती है, उसमें समझदारी है, और मुझे प्रतीत होता है कि आप मुझे जो बता रहे हैं उससे संभवतः विश्व में शांति स्थापित हो सके। और मैं अपने-आपसे कहता हूँ "अब, क्या मैं भय से मुक्त हो सकता हूँ?" मैं महसूस करता हूँ कि मैं समस्त मनुष्यचेतना के लिए पूरी तरह उत्तरदायी हूँ। मैं देख पाता हूँ कि जब मैं भय की छानबीन कर रहा होता हूँ तब मैं समस्त मनुष्य-चेतना का भय कम करने में उसकी सहायता कर रहा होता हूँ। तब मृत्यु का कुछ अलग ही अर्थ होता है। फिर मैं ऐसे मनोराज्य नहीं रचता कि मैं भगवान की बगल में बैठने वाला हूँ या किसी खास नीहारिका से गुज़रते हुए मैं स्वर्गारोहण करने वाला हूँ। तो अब मैं ऐसा जीवन जी रहा हूँ जो मेरा अपना विशिष्ट जीवन नहीं है। मैं अब समस्त मनुष्यजाति के जीवन को जी रहा हूँ, और यदि मैं मृत्यु को समझ पाता हूँ, शोक को समझ पाता हूँ तो मनुष्यता की समग्र चेतना का परिमार्जन कर रहा होता हूँ। इसीलिए मृत्यु के अर्थ को समझना और संभवतः यह पता लगाना बहुत आवश्यक है कि मृत्यु की एक गहन सार्थकता है, प्रेम के साथ उसका गहरा नाता है, क्योंकि जब आप कुछ समाप्त करते हैं, प्रेम मौजूद होता है। जब आप आसक्ति का पूर्णतः अंत कर देते हैं, तो प्रेम विद्यमान होता है।

23rd July, 1981	ज्ञानेन, २३ जुलाई १९८१